पराया धन

विमला लाल

पराया धन

आज के सामाजिक जीवन की आपाधापी से लड़ती-
जूझती नारी के जीवन पर आधारित उपन्यास

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नयी दिल्ली-110002

पराया धन

विमला लाल

प्रकाशक :
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
'शफीक मेमोरियल'
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002
टेलेफोन : 3319282

ग्रन्थांक : 156
© भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ : मूल्य : 3.00
पहला संस्करण 1985

मुद्रक :
शान प्रिंटर्स
शाहदरा
दिल्ली-110032

अपनी ओर से—

सामने एक जंगल है और हांफता हुआ सन्नाटा। बीच में जंगल के पार जाने के लिए एक ऊबड़खाबड़ रास्ता है। सड़क तो क्या कहेंगे, हां—पतली-सी पगडंडीनुमा एक डगर है। खैर, कुछ भी हो, है तो रास्ता ही—जंगल के पार जाने का !………

हमारे देश—यानी दुनिया के सबसे बड़े आजाद जनतन्त्र देश—में 'अनपढ़ता' या शालीन भाषा में कह सकते हैं : 'निरक्षरता' एक घना भयावह जंगल ही तो है, जिसे पार करने के लिए आजादी के बाद हम बीहड़ डगर पर लगातार चलते रहे हैं और आगे भी तमाम उलझनों और आपाधापी के बावजूद चलते रहने की हमारी यह इच्छा और कोशिश लगातार जारी है। रही बात इस लंबे सफर में चलते रहने के दौरान सफलता की—तो आंकड़े बोलते हैं कि इस समय हम कहां और किस पड़ाव पर हैं। मानना होगा, और मान लेना भी चाहिए, कि हमारे इस लम्बे सफर की, कुछ अड़चनों और भटकावों के बावजूद एक सही दिशा बराबर बरकरार है। उदाहरण जरूरी ही हो तो, फिलहाल बेझिझक अपने इसी पड़ाव का हवाला देना ही काफी होगा कि आपके हाथों में आयी यह पुस्तक नवसाक्षरों के लिए प्रकाशित है।

जी हां, इस शृंखला में प्रकाशित आठ नयी पुस्तकें पिछले दिनों भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ द्वारा 'ऐस्पेबे' के सहयोग से सूरजकुंड में आयोजित लेखक-कार्यशाला में लिखी गई थीं। इस तरह की कार्य-शालाएं भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ द्वारा पहले भी कारगर रूप से

सम्पन्न हुई हैं, लेकिन विषय की विविधता और सर्जनात्मक लेखन की सबरसता के कारण यह सूरजकुंड कार्यशाला सहज ही अनूठी हो गयी। इस कार्यशाला में राजधानी दिल्ली तथा दूसरे शहरों से आए सजग लेखकों ने पूरी हार्दिकता से हिस्सा लिया और राष्ट्रीय एकता, परिवार कल्याण, जनसंख्या शिक्षा, सामाजिक कुरीतियों, महिला शिक्षा, पर्यावरण, ग्रामीण विकास—जैसे विषयों पर खुले मन से लिखा। हमें विश्वास है, उनकी लिखी पुस्तकें नव-साक्षर साहित्य के पाठकों, और प्रशिक्षकों को भी, पूरा सन्तोष अवश्य देंगी।

अंत में, 'ऐस्पेबे' और कार्यशाला में सक्रिय रूप से भागीदार लेखकों के प्रति मैं आभारी हूं।···साथ ही, इस कार्यशाला को सफल बनाने के लिए भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के सहयोगियों—डॉ० एस० सी० दत्ता, श्री जे० एल० सचदेव और श्री पद्मधर त्रिपाठी को अपना धन्यवाद देता हूं। आमीन !·········

विनम्र

—जे० सी० सक्सेना
महासचिव (अवैतनिक)

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
नयी दिल्ली-110002

25 दिसम्बर, 1985

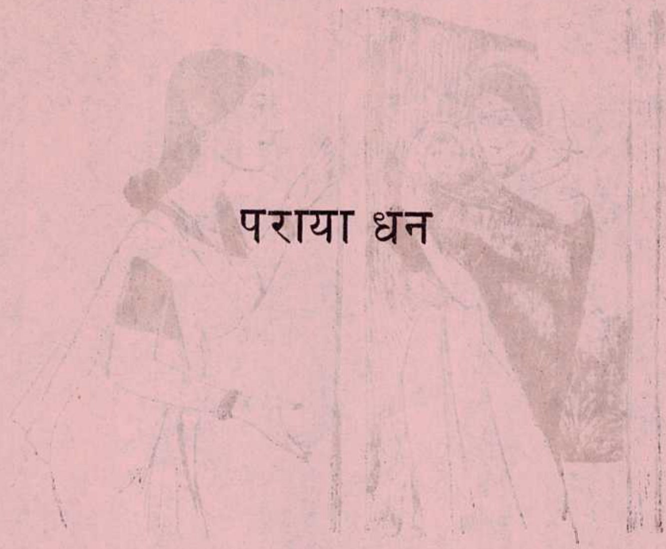

पराया धन

बाहर मीठी-मीठी ठंडक होने लगी थी। राधा बिस्तर में बैठी चाय की चुस्की से सुस्ती उतारने की कोशिश कर रही थी कि दरवाजे पर लगी घंटी बज उठी।

"अरे यह कौन सवेरे-सवेरे आ धमका ?"—राधा के मुंह से अचानक निकला और उसने हाथ में पकड़ा चाय का प्याला पास में पड़ी तिपाई पर रख दिया। पैरों में स्लीपर डाले और गाऊन की पेटी नांफती हुई दरवाजा खोलने चल दी।

दरवाजा खोलते ही राधा ने जिसे खड़े देखा, उसे देखकर वह हैरान रह गई। दरवाजे पर उसके बचपन की सहेली चंदा खड़ी थी। चंदा की हालत देखकर तो राधा खड़ी की खड़ी रह गई। उसके मुंह से बोल ही नहीं फूटा।

बिखरे बाल, मैली धोती, हाथ में एक छोटा-सा थैला और कंधे पर साल-भर का बच्चा। ऐसा लग रहा था जैसे चंदा मीलों का सफर तय करके आ रही हो। राधा सकपका गई। फिर अचानक उसके मुंह से निकला, "अरे चंदा तुम? तुम कैसे आ गई! सब ठीक तो है न? आने की खबर तो कर देती। स्टेशन लेने चली आती।"

चंदा ने देखा, राधा कुछ गड़बड़ा रही है। शायद बहुत हैरानी हो रही थी उसे। उसने मुसकराने की कोशिश की और धीरे से बोली, "सब कुछ यहीं पूछ लोगी या भीतर भी आने को कहोगी!"

हड़बड़ाहट में राधा अब तक दरवाजे को पकड़े दहलीज के बीचोबीच खड़ी थी। चंदा की बात सुनकर उसने लपक कर चंदा के हाथ से थैला पकड़ लिया और फिर बोली, "अरे, आ न! आ जा—चल भीतर। ला, मुन्ने को मुझे दे

दो ।" राधा ने थैला फिर चंदा के हाथ में दे दिया और मुन्ने को पकड़ कर कंधे से लगा लिया। फिर हंस कर बोली, "अरी चंदा, यह मुन्ना है या मुन्नी—यह तो पूछा ही नहीं ?" लगा जैसे राधा झेंप मिटाने के लिए ही पूछ रही हो। चंदा धीरे-से मुसकरा दी। कुछ बोली नहीं।

चंदा राधा की बचपन की सहेली थी। दोनों का बचपन गांव की गलियों में बीता था। एक साथ खेलीं, एक साथ पढ़ीं। दोनों का हंसना-रोना साझा रहा था।

राधा और चंदा के पिता भी आपस में मित्र थे। चंदा के पिता रघुराज को राधा के पिता राधारमण ही गांव में लाए थे। पढ़े भी वे साथ ही थे। राधारमण तो गांव में अपने पिता की जमीन-जायदाद संभालने लगे और रघुराज ने वहीं एक कारखाने में नौकरी कर ली। नौकरी उनकी अच्छी थी। वेतन भी ठीक मिलता था। कारखाने में लाखों का आर-पार होता था। वक्त पड़ने पर रघुराज मालिक की आर-पार में शामिल नहीं हो सके और उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया। रघुराज परेशान रहने लगे। राधारमण को पता चला तो वह अपने मित्र को गांव में ले आए।

उस समय रघुराज की पत्नी सुशीला की गोद में एक ही बेटी थी चंदा। बाकी तीनों बच्चे तो बाद में हुए।

राधा के पिता राधारमण ने उन्हें बहुत कहा कि वह उनकी जायदाद की देखभाल करें और उन्हीं के साथ रहते रहें। पर रघुराज नहीं माने। वह जायदाद के पचड़े में नहीं पड़ना चाहते थे। उन्होंने उसी गांव में, बच्चों को पढ़ाने का काम अपने ऊपर ले लिया। बाद में स्कूल को

सरकार ने अपने हाथों में ले लिया, पर रघुराज गांव के बच्चों को घर में पढ़ाते रहते थे। चंदा के पिता का वेतन तो कम था, लेकिन वह उसी में गुजर करते। कभी-कभी गांव के बालक, जो उनके घर पर पढ़ने आते, खेत की शाक-भाजी से उनकी मदद कर देते। मांगते वह किसी से कुछ नहीं।

चंदा बचपन से ही बड़ी समझदार थी। जैसा नाम था वैसा ही रूप भी था। जो देखता, कहता—"क्या राजरानी का रूप पाया है!"

चंदा अभी आठवीं जमात में ही पढ़ती थी कि अचानक चंदा की मां सुशीला चल बसी। घर का सारा बोझ चंदा

के नाजुक कंधों पर आ गया। छोटे-छोटे तीन बहन-भाई थे। पिता थे। ऊपर से पढ़ाई भी थी। सभी चंदा को ही देखना पड़ता।

दसवीं जमात तक राधा और चंदा साथ ही रहीं। फिर राधा को उसका मामा शहर पढ़ाने के लिए ले गया और चंदा की शादी तय हो गई। चंदा का रूप देखकर रघुराज के मन में एक भय समाया रहता था। वह जल्दी से अपनी जिम्मेदारी पूरी कर देना चाहते थे। फिर घर-वर भी ठीक मिल रहा था। लड़का पढ़ा-लिखा सुशील था। घर भी भरा-पूरा था। शादी की बात सुन कर चंदा ने एक बार दबी-जबान से कहा भी कि वह अभी शादी नहीं करेगी। उसके छोटे-छोटे बहन-भाइयों को कौन देखेगा ? लेकिन चंदा के पिता नहीं माने। बोले, "बेटी, पराए धन को कब तक रोकूंगा। तेरी मां नहीं है। मुझे अपना फरज निभाने दो !"

आज चंदा को इस हालत में देखकर राधा को लगा कहीं पराया धन लौट तो नहीं आया ?

राधा मुंह से कुछ नहीं बोली। चुपचाप चंदा का हाथ पकड़ भीतर ले गई। चंदा को बैठने के लिए एक कुरसी देकर, मुन्ने को उसने अपने बिस्तर पर पड़ी रजाई में ही सुला दिया। फिर घूम कर चंदा से बोली, "हां, अब बता चंदा, क्या हालचाल हैं ? हमारे जीजा जी साहब कैसे हैं ? कितने दिनों से तो तेरा कोई पत्र ही नहीं आया। आज अचानक आने की याद कैसे आ गई।"

चंदा कुरसी की पीठ से सिर टिकाए चुपचाप आंखें मूंदे बैठी थी। लगता था, जैसे बड़ी सोच में डूबी हो। राधा की बात सुनकर चंदा ने आंखें खोलीं। नजर उठा कर एक बार राधा के चेहरे की ओर देखा, फिर धीरे से बोली—

"राधा न जाने कैसे आ गई। पर इतना जानती हूं कि पहले-पहल जब किसी ठिकाने की सोची तो तेरी ही याद आई। टिकिट कटाया और सीधे चली आई। पिताजी के पास नहीं जा सकी। सोचा, उन्हें क्यों दुखी करूं। पहले ही उन अकेले पर पूरे घर का बोझा है। तीन-तीन बच्चे हैं संभालने वाले। मां तो है नहीं। सोचा—बाद में खबर कर दूंगी, पहले कोई ठिकाना ठीक कर लूं।

"यह क्या कह रही है तू चंदा? सब ठीक तो है?" राधा ने कुछ घबरा कर पूछा।

"हां, कहने को तो सब ठीक ही है राधा—बस फरक इतना ही है कि आज तेरी यह चंदा घर से बेघर हो गई!" —कहते ही चंदा फूट-फूट कर रोने लगी। लगा—जैसे कोई बहुत देर से रुका बांध टूट गया हो।

चंदा को इस तरह रोते देख राधा के भी आंसू बहने लगे। वह घबरा गई। कुछ कह नहीं सकी। चुपचाप चंदा को अपनी बांहों में जकड़ लिया और आंसू पोंछने लगी। फिर धीरे-से पूछा, "यह कैसे हुआ चंदा? तुमने कोई खबर तक नहीं दी। कभी कोई झगड़ा भी नहीं सुना।"

"झगड़ा करती तब तो झगड़ा होता राधा! सहने में क्या झगड़ा!"—चंदा संभल कर, फिर से कुरसी से पीठ टिका कर बोली, "फिर क्या खबर देती मैं? मेरा तो रोज का रोना था, रोज का हंसना। सुबह का मरना, रात का जीना। उसमें भी कभी जान नहीं पाती कि कब दिन हो जाएगा और कब रात आएगी! खाना बनाती थी, नसीब होगा या नहीं, कोई भरोसा नहीं रहता था। कभी आंसू

पीती, कभी पानी ।"

"क्या मतलब ?"—राधा ने हैरान होकर पूछा, "इतना कुछ होता रहा और तुमने खबर तक नहीं दी ।" फिर कुछ रुक कर बोली, "लेकिन यह सब हुआ कैसे ?"

"यह एक लंबी कहानी है बहना, जो दहलीज पर रखते ही शुरू हो गई थी । पिता का दिया बक्सा ही मेरा जानलेवा हो गया !"

"कहती क्या हो तुम ?"

"हां राधा, बक्से का ढक्कन खुलते ही, सास-ननद ने जो माथे पर बल डाले, वह फिर कभी उतरे ही नहीं । उस बक्से में एक भी तो ढंग की चीज उन्हें नहीं मिली । कुछ भी विदेशी नहीं था । सब देसी ही देसी था । मेरी ननद का कहना था, कि मेरे पिताजी-जैसे गंवार आदमी को ऐसी बढ़िया चीजें खरीदने का सलीका भला कैसे हो सकता था ।"

राधा चुपचाप चंदा के मुंह की तरफ देखे जा रही थी । चंदा ने एक ठंडी सांस ली और फिर बोली, "मुझे मिली हर चीज ही तो घटिया थी । पहले-पहल तो मैं कुछ चीजें बदल भी लाई । लेकिन कब तक बदलती । पिताजी ने जान एक करके शादी की थी । तुम तो जानती हो, उन्होंने सदा ईमान की कमाई ही खाई है । पैसे का कभी लालच नहीं किया । दो दूनी चार करते ही उनके दिन बीते । हर समय मुझे विदेशी चीजें कहां से खरीद कर देते !"

बात का सिलसिला जारी रखते हुए चंदा ने अपनी

बात जारी रखी—"राधा ! धीरे-धीरे मैंने चीजें लानी बंद कर दीं। मुन्ना हुआ तब भी चुप लगा गई। फिर तो बस क्या था—चांद-सी बहू, जिसे देख वह लोग अघाते नहीं थे, जी का जंजाल हो गई। मुझे किसी बात का भी तो सलीका न रहा। न पहनने का न ओढ़ने का, न खाने का न सोने का। बात-बात में ताने। बात-बात में झगड़ा। सुबह पांच बजे से खाने में लगती, रात दस बजे तक नौकरी बजाती; लेकिन किसी एक को खुश नहीं कर पाई।"

"तो जीजा जी कुछ भी नहीं कहते थे ?" राधा ने बड़ी बेचैनी से पूछा।

"हां, कहते क्यों नहीं थे, वह भी कहते थे।"—चंदा ने सामने दीवार की ओर देखते हुए, ठंडी सांस खींच कर कहा, "रात दस बजे के बाद जब रसोई का किवाड़ भिड़ा कर, सोने के कमरे का किवाड़ खोलती तो छूटते ही कहते—'हो गई महारानी को फुरसत ! यह सड़ी सूरत लिए मत आया करो मेरे सामने। जब देखो सूरत पर बारह बजे हैं। अपने दोस्तों की बीवियों को देखता हूं, तो घर छोड़ जाने को मन करता है।'···राधा ! मैं उन्हें किसी दिन भी नहीं कह पाई कि मेरा भी कभी हंसने-बोलने का मन होता है। दो मीठे बोल सुनने के लिए जी तरसता है। मैं भी चाहती हूं कि मेरा दुःख-सुख कोई सुने। लेकिन ऐसा कोई नहीं जिसका सहारा लेकर मैं भी चल सकूं। दिल चाहता है कि मेरा भी कोई ऐसा होता जो बहते आंसू पोंछ लेता ? पर राधा कभी भी कह नहीं पाई। अपना बोझ सदा आप ही घसीटना पड़ा।···" कहते-कहते चंदा की आंखों से फिर

आंसू बहने लगे

"कैसे सहा तूने ?" राधा के मुंह से एकदम निकला। वह चंदा की बात सांस रोके सुन रही थी।

चंदा ने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसी तरह सामने देखती हुई बोली, "—और जानती हो राधा ! परसों वह घड़ी भी आ गई, जिसकी हर पल मुझे शंका बनी रहती थी। उस रोज सुबह से घर में चहल-पहल थी। मेरी छोटी ननद को कोई देखने आने वाला था। विदेशी सामानों की प्रदर्शनी लगाई जा रही थी। सब काम मेरी सास अपनी देख-रेख में करवा रही थी। मैंने किसी भी बढ़िया चीज को हाथ नहीं लगाया। खाना बनाने में जुटी रही। पर राधा न जाने कैसे मेरे हाथ से एक प्लेट फिसल पड़ी। फिर तो बस क्या था ! सास ने आव देखा न ताव—जड़ दिया एक जोर का तमाचा मेरे गाल पर ! और बोली, 'इस गंवार से और कुछ हो भी क्या सकता था। भिखमंगे की बेटी ने कुछ देखा हो तो सहेजना भी जाने। हर काम में इस कुलछनी को तो अपशकुन ही करना होता है। जब तक यह कलमुंही घर पर रहेगी, कोई भी काम सीधा नहीं होगा'। और फिर—फिर···"—कहते-कहते चंदा की हिचकी बंध गई। रोते-रोते बोली, "राधा ! इस नन्हीं जान को मेरी झोली पर पटक कर, बाहर का दरवाजा दिखा दिया गया।"

"जीजा जी नहीं थे क्या ?" राधा ने गुस्से से पूछा।

"थे क्यों नहीं। वही मां के पीछे खड़े थे। मैंने आंख उठा कर उनकी तरफ देखा भी। पर राधा, मेरी आंखों

की मजबूरी तो समझना उन्होंने कभी सीखा ही नहीं। मुंह नीचा किए भीतर चले गए।"

"लेकिन चंदा, यह लोग तेरा रूप देख कर ही तो तुझे ब्याहने आए थे। जहां तक मैं जानती हूं, उनकी कोई मांग भी नहीं थी। अगर कुछ मांगते तो चाचा जी रिश्ता करते ही नहीं, इतना तो मैं भी जानती हूं। उन्होंने तो साफ-साफ कहा था कि लड़की के सिवा उन्हें कुछ नहीं चाहिए। भगवान की दया से उनका घर भरा-पूरा है।"

"उस भरे-पूरे घर में मेरे लिए कुछ नहीं था राधा। शायद यह कहना वह भूल गए थे।" चंदा ने गुस्से से कहा, "राधा! जो लोग मांगते हैं वह बहुत अच्छे होते हैं। अपने मन की गांठ पहले ही खोल लेते हैं। लेकिन यह भरेपूरे घरों वाले—बस भगवान का नाम लो! उनके मुखड़ों पर तो इतनी रंगीन नकाब चढ़ी होती है कि समझना कठिन। ज्यों-ज्यों उतारो, त्यों-त्यों नंगे! नित नई मांग है उनकी। उनकी यह मांग न जीने देती है न मरने। तिल-तिल कर जलाती है।—और मरद उसी आग पर हाथ सेंकते हैं।"

"थू है ऐसे मरदों पर!" राधा के मुंह से एकदम निकला। फिर जीभ लगा कर चुप लगा गई। उसने देखा—चंदा का मुंह गुस्से से लाल था। उसका जी हलका करने के लिए राधा धीरे से बोली, "चल छोड़ चंदा, जो होना था हो गया। भगवान का शुक्र है कि तू सही-सलामत लौट आई है। अखबारों की रोज-रोज जलने-मरने की खबरें पढ़ कर तो जी दहल जाता है।"

जलने का नाम सुनकर तो चंदा को और भी गुस्सा आ गया। तमक कर बोली, "तेरी यह सहेली जलने वाली नहीं है, राधा!—यह तू अच्छी तरह जान ले। ऐसी कायरता कभी नहीं सीखी मैंने।" फिर सहज होकर बोली, "तू ही बता राधा, जलकर मैं उनका क्या बिगाड़ लेती?

कुछ दिन की कचहरी होती न! कुछ घूस चलती, कुछ सिफारिश। दे-दिला कर मामला रफा-दफा हो जाता। और फिर—फिर एक नई शादी—एक नई दुल्हन—नया दहेज! देश-विदेश की चीजों से भरपूर!…" चंदा ने दूर दीवार के बाहर देखते हुए कहा।

राधा को लगा—जैसे चंदा उन्हीं चीजों को अपनी आंखों से देख रही हो। फिर न जाने एकदम क्या हुआ कि चंदा उठ कर खड़ी हो गई। राधा को कंधों से पकड़ झकझोर कर बोली—"अब तू ही बता राधा, मैं उनका क्या

बिगाड़ लेती ? क्यों जलती मैं ? बाप की बेटी चली जाती और बेटे की मां ! बता—मैं ऐसा क्यों करूं ?" कहते-कहते चंदा फिर फफक कर रोने लगी। राधा को लगा—चंदा पागल हो जाएगी। उसने चुपचाप उसे रोने दिया। सोचा—मन कुछ संभल जाएगा।

वह चुपचाप उठी। मुन्ने पर पड़ी रजाई को एक बार ठीक किया और चाय के लिए बिजली की केतली लगा दी। फिर चंदा के पास आकर बोली, "भूल जा इस किस्से को चंदा ! उठ चाय पी ले और फिर इस बच्चे के लिए दूध भी तो लाना पड़ेगा।"—और राधा ने झुक कर सोए मुन्ने के माथे को चूम लिया।

राधा के माता-पिता अभी गांव में ही थे। लेकिन राधा पढ़ने के बाद गांव नहीं लौटी। कभी तीज-त्यौहार को हो आई तो हो आई। वह शहर में ही नौकरी करने लगी थी। पहले मामा के पास ही रहती थी। जब वह भी बाहर चले गए तो, मामी की मां के घर एक कमरा ले कर रहने लगी थी। पढ़-लिख कर गांव में जाकर रहना उसे भाता नहीं था। जी घुटता था उसका। उसके पिताजी शादी के लिए जोर देते तो टाल जाती। लेकिन आज चंदा की हालत देखकर उसका जी और भी घबराने लगा। उसे लगा—गांव में तो ऐसी हालत नहीं होती थी। वह कैसी भी हो, दहेज कैसा भी हो, घर में समा ही जाती थी। पर यहां शहर में···

चंदा हाथ-मुंह धोकर आई तो देखा, चाय का पानी उबल रहा था। राधा न जाने किस सोच में डूबी चुपचाप

बैठी थी। चाय की तरफ उसका ध्यान ही नहीं था।

चंदा ने राधा के पास आकर पूछा, "राधा, क्या सोच रही हो ? पानी तो उबल भी रहा है—ओह···"

राधा ने झटपट केतली उतारी और चाय बनाने लगी। चाय का प्याला चंदा के हाथ में पकड़ाते हुए राधा, न जाने किन विचारों में डूबी, धीरे से बोली, "चंदा तेरे इस मिट्टी के माधो पति महाराज को सबक तो सिखाना ही पड़ेगा।"

चंदा मुन्ने को गोद में लिए, दूध पिला रही थी। राधा के हाथ से चाय का प्याला पकड़ते हुई बोली, "क्या मतलब ?"

"मतलब यही कि, मेरी एक सहेली के पिता वकील हैं। उनके पास जाकर सलाह करनी होगी कि उस भोंदू को कैसे घसीटा जा सकता है। दावा तो हमें करना ही होगा। चाचा जी को भी बुला लेंगे।" राधा ने चंदा के पास ही बैठते हुए कहा।

चंदा ने आंख उठा कर राधा की ओर देखा। चाय का प्याला नीचे रख दिया और तुनक कर बोली—"राधा, लगता है मेरे आने से तुझे बहुत तकलीफ हुई है। लेकिन बहन, मैं वायदा करती हूं, अधिक दिन तुझे तंग नहीं करूंगी !"

"तू तो बेकार में गुस्सा हो गई चंदा ! मेरा मतलब यह नहीं था।"

"मैं तेरा मतलब जानती हूं राधा, लेकिन जितना मैं जलील हो चुकी हूं उतना ही बहुत है। और अब नहीं। तू क्या चाहती है कि कचहरी में खड़ी होकर, अपने ही

पति से भीख मांगूं, रोटी की या प्यार की ? जो आदमी एक दिन भी अपनी पत्नी को आदर नहीं दे सका, वह प्यार क्या देगा। मां के पीछे खड़े हो कर जिसके मुंह से बोल तक तो फूटा नहीं वह मेरी भाषा क्या समझेगा ?" कहते-कहते चंदा हांफने लगी। उसे लगा—वह बहुत थक गई है। फिर कुरसी पर बैठ कर धीरे-से बोली—"नहीं राधा, इतना-सा मान तो मेरा बना रहने दे। बिलकुल न उधेड़ मुझे। अपने इस कलेजे के टुकड़े को बाप की तरह कायर नहीं बनाना मुझे ! इसे मुझे आदमी बनाना है। अपने हाथों से कमा कर खाना सिखाना है। ससुराल से भीख नहीं मंगवानी। और उसके लिए राधा, मुझे अपने हाथों में बल लाना है। इन्हीं हाथों से इसे कमा कर खिलाना है। बाप की भीख पर नहीं पालना।"—चंदा ने अपने हाथ आगे करते हुए कहा।

राधा सोच भी नहीं सकती थी कि चंदा इतना बोल भी सकती है। आज तक तो उसे ऊंचा बोलते भी किसी ने नहीं सुना था। उसे लगा—चंदा एक नई राह उसे दिखा रही है। वह चुपचाप चंदा के मुंह की ओर देखती रही, बोली कुछ नहीं।

राधा को इस तरह अपनी ओर देखती देखकर, चंदा थोड़ा-सा मुसकरा दी। राधा के कंधे पर हाथ धर कर बोली, "क्या देख रही हो राधा। मैंने कुछ गलत कह दिया।"

"नहीं, चंदा !"—राधा ने उसके हाथ पर प्यार से हाथ रखते हुए कहा, "तुमने तो ऐसी बात कही है जो

हमने कभी सोची भी नहीं थी। मैं तो सोच रही थी, यह राह हर लड़की क्यों नहीं पहचान लेती। जल कर मरना ही क्या उनका अंत है चंदा! तुम नहीं जानती कि मेरे पिताजी शादी के लिए कितना जोर देते हैं। मैं यहां रहती हूं तो उन्हें कितनी बातें सुननी पड़ती हैं। पर मैं इसी डर से शादी के लिए हां ही नहीं करती थी। यहां की खबरें पढ़ कर तो लगता था—औरत का कोई घर नहीं है, कोई ठिकाना ही नहीं है। मां-बाप पराया धन कह कर पालते हैं और दूसरे इस पराये धन को ब्याज समेत लेकर भी दया कर अपनाते हैं। ब्याज की दर कभी रुकती नहीं, बढ़ती ही रहती है। साथ ही मूल को अपने ढंग से नष्ट करने की छूट भी होती है। कैसा न्याय है यह ?"

"यही तो मैं कह रही थी राधा। यह न्याय हमें कचहरियों में नहीं ढूंढ़ना। इसके लिए स्वयं जूझना है। देख मेरे हाथ में यह एक-एक चूड़ी है। और तो कुछ है नहीं। इनको तू बेच दे और एक मशीन खरीद दे। तू तो जानती है, चाची जी से मैंने गांव में अच्छा सीना-पिरोना सीख लिया था। इसी से नए जीवन को शुरू करूंगी। फिर पिताजी को भी खबर कर दूंगी। अभी मैं उन्हें दुखी नहीं करना चाहती।

"अपने पिता को तूने इतना कमजोर कैसे समझ लिया बेटी!" पीछे से आवाज सुनकर, दोनों एकदम मुड़ीं तो उन्होंने देखा चंदा के पिताजी खड़े थे। चंदा के मुंह से एकदम निकला—"पिताजी! आप ?" "हां बेटी, तुझे गाड़ी पर बिठाने के बाद स्टेशन मास्टर ने मुझे खबर कर

दी थी । तुम तो जानती ही हो जीवन मेरा मित्र है ।"

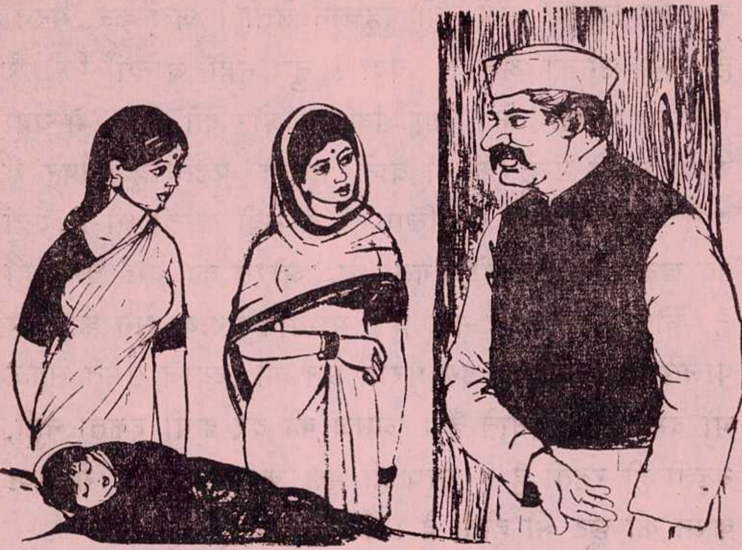

"हां पिता जी, उन्होंने तो अपने ही पास ठहर जाने के लिए कहा था । पर मैं नहीं मानी ।"

"लेकिन बेटी तूने अपने पिता के बारे में इतनी गलत राय कैसे बना ली। जिसने तुझ-जैसी बहादुर बेटी को जन्म दिया, वह खुद इतना तुच्छ होगा कि जरा-सी बात पर रोने बैठ जाएगा ! नहीं—बेटी नहीं ! तुझ पर मुझे नाज है । तू मुझ पर बोझ नहीं, सहारा है । चल बेटी तैयार हो जा । तेरी गांव की पाठशाला तुझे बुला रही है । गांव की बेटियों को तेरी बड़ी जरूरत है । और तेरे इस शैतान को मैं वहीं पढ़ाऊंगा—तेरे-जैसा बहादुर बनाऊंगा !"—कहते हुए चंदा के पिता ने आगे बढ़कर अपने नाती को उठा लिया और छाती से लगा लिया ।

चंदा को लगा जैसे उसके सिर से एक बोझ उतर गया

हो। वह राधा की ओर देखकर मुसकरा दी। चंदा की चमकती आंखों को देखकर राधा को लगा, जैसे चंदा नहीं चांद मुसकरा दिया हो और वह भाग कर चंदा से लिपट गई।

●●●

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
'शफीक मेमोरियल'
17-बी, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002